**ओ३म्**

**‘ब्रह्मचर्य का स्वरुप व उसके पालन से लाभ’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

 सभी मनुष्य सुख की ही कामना करते हैं, दुःख की कामना कोई मनुष्य नहीं करता। सुख प्राप्त हों और जीवन में दुःख न आयें, इसके लिए प्रयत्न करना होता है। सुख व दुःख का आधार शरीर है। यदि हमारा शरीर दुर्बल व रोगी है तो यह दुःख का धाम बन जाता है और यदि यह बलवान व निरोग है तो यह सुख का आधार होता है। दुर्बलता और रोगों से रक्षा के लिए ब्रह्मचर्य एक ऐसा उपाय वा साधन है जिसे धारण करने से मनुष्य दुःखों से बच सकता है और सुखी जीवन व्यतीत कर सकता है। ब्रह्मचर्य क्या है? यह शरीरस्थ सभी इन्द्रियों यथा दर्शन, श्रवण, गन्ध, रस व स्पर्श पर पूर्ण नियन्त्रण को कहते हैं। यदि हमारी कर्म इन्द्रियों के यह पांचों अवयव पूर्णतयः पवित्र हों, इनमें किंचित मलिनता व विकार न हों, तो यही ब्रह्मचर्य वा इसका पालन है। जो मनुष्य अदर्शनीयों वस्तुओं का दर्शन, अश्रवणीय कथाओं का श्रवण, विपरीत व हानिकारक गन्ध, रस व स्पर्श का सेवन करता है तो उसका ब्रह्मचर्य खण्डित हो जाता है या यह बातें ब्रह्मचर्य को कुप्रभावित व खण्डित करती हैं। हम भोजन के रूप में जो कुछ ग्रहण करते हैं उससे शरीर में भिन्न-भिन्न पदार्थ व धातुएं बनती हैं जिनसे शरीर में शक्ति उत्पन्न होती है। ऐसी ही धातुओं में से पुरुष शरीर में एक धातु वीर्य होती है। इसका शरीर में अधिक मात्रा व उत्कृष्ट अवस्था में होना शरीर व प्राणों के बल, आरोग्यता व बौद्धिक व आत्मिक उन्नति का कारण व साधन होता है और इसका नाश व अपव्यय ही ब्रह्मचर्य का नाश व खण्डन होता है जो कि पंचकर्मेन्द्रियों की पवित्रता व नियंत्रण न होने के कारण उत्पन्न होता है। हमारी सभी इन्द्रियां मन की प्रेरणा से इच्छित विषयों में आकर्षित होती हैं। यदि मनुष्य को सत्य-असत्य वा उचित-अनुचित का ज्ञान है और मन में असत्य व अनुचित कार्यों को न करने का दृण संकल्प है तो मन इन्द्रियों के अपवित्र व हानिकारक कार्यों से बच जाता है और सुख का लाभ करता है। इस ब्रह्मचर्य की रक्षा व पालन के लिए मनुष्य को वायुसेवन, प्रभातवेला में भ्रमण सहित आसन, प्राणायाम व ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना व उपासना करना भी आवश्यक होता है। महर्षि दयानन्द सरस्वती ने सत्यार्थप्रकाश के तृतीय समुल्लास में आयु के अनुसार ब्रह्मचर्य के तीन प्रकार लिखे हैं जिनके नाम हैं **कनिष्ठ ब्रह्मचर्य, मध्यम ब्रह्मचर्य और उत्तम ब्रह्मचर्य।** आज इस लेख में हम इन तीनों प्रकार के ब्रह्मचर्य का पाठकों के लाभार्थ इस हेतु से वर्णन कर रहे हैं कि वह इसे जान व समझ कर स्वयं लाभान्वित हों व इसका प्रचार कर धर्मलाभ प्राप्त करें।

ब्रह्मचर्य का मुख्य प्रयोजन न केवल शरीर व प्राणों को बलवान बनाना है अपितु इसका मुख्य प्रयोजन वेदादि शास्त्रों के ज्ञान व विज्ञान सहित समस्त विद्याओं का अर्जन भी है। महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थप्रकाश में शास्त्रों के आधार पर लिखा है कि पांचवे वा आठवें वर्ष से लड़के लड़कों की पाठशाला तथा लड़कियां लड़कियों की पाठशालाओं में जावें और नियम-पूर्वक अध्ययन का आरम्भ करें। आठवें वर्ष से आगे छत्तीसवें वर्ष पर्यन्त अर्थात् एक-एक वेद के सांगोपांग पढ़ने में बारह-बारह वर्ष मिल के छत्तीस और आठ मिल के चवालीस अथवा अठारह वर्षों का ब्रह्मचर्य और आठ पूर्व के मिल के छब्बीस वा नौ वर्ष तथा जब तक विद्या पूरी ग्रहण न कर लेवे तब तक ब्रह्मचर्य रक्खे। छान्दोग्य उपनिषद के आधार पर ब्रह्मचर्य का वर्णन करते हुए महर्षि दयानन्द लिखते हैं कि ब्रह्मचर्य तीन प्रकार का होता है। **प्रथम कनिष्ठ** जो पुरुष अन्न-रस-मय देह और देह में शयन करने वाला जीवात्मा, यज्ञ द्वारा अतीव शुभगुणों से संगत और सत्कर्तव्य है, **इसको यह कर्तव्य अवश्य है कि 24 वर्ष पर्यन्त जितेन्द्रिय अर्थात् ब्रह्मचारी रह कर वेदादि विद्या और सुशिक्षा का ग्रहण करे और विवाह करके भी लम्पटता न करें तो उसके शरीर में प्राण बलवान् होकर सब शुभगुणों के वास कराने वाले होते हैं। इस प्रथम वय में जो अपना सारा समय विद्याभ्यास में तपस्या करता हुआ लगाये और वह आचार्य ब्रह्मचारी को वैसा ही उपदेश किया करे और ब्रह्मचारी ऐसा निश्चय रखे कि जो मैं प्रथम अवस्था में ठीक-ठीक ब्रह्मचर्यपूर्वक रहूंगा तो मेरा शरीर और आत्मा आरोग्य बलवान् होके मेरे प्राण शुभगुणों को बसाने वाले होंगे।** महर्षि दयानन्द गृहस्थियों को कहते है कि तुम इस प्रकार से अपने निजी भौतिक सुखों का विस्तार करो कि जिससे ब्रह्मचारी व विद्यार्थी ब्रह्मचर्य का लोप न करें अर्थात् वह भौतिक सुख-सुविधाओं की ओर आकर्षित व कुप्रभावित न हों और वह 24 वर्ष तक तो ब्रह्मचर्य का पालन कर सके। आचार्य ब्रह्मचारी को उपदेश करते हुए विश्वास दिलाता है कि **यदि तू 24 वर्ष के पश्चात् गृहाश्रम करेगा तो प्रसिद्ध है कि रोगरहित ररेगा और तेरी आयु भी 70 वा 80 वर्ष होगी।**

**दूसरा ब्रहमचर्य मध्यम ब्रह्मचर्य** कहलाता है। **जो मनुष्य 44 वर्ष पर्यन्त ब्रह्मचारी रह कर वेदाभ्यास करता है उसके प्राण, इन्द्रियां, अन्तःकरण और आत्मा बलयुक्त होकर सब दुष्टों को रुलाने और श्रेष्ठों का पालन करने वाले होते हैं।** यदि कोई ब्रह्मचारी प्रथम वय में जैसा स्वामीजी ने कहा है, कुछ तपश्चर्या करे तो उसका यह रुद्ररूप प्राणयुक्त मध्यम ब्रह्मचर्य सिद्ध होगा। स्वामीजी कहते हैं कि हे ब्रह्मचारी लोगो ! तुम इस ब्रह्मचर्य को बढ़ाओं। जैसे इस ब्रह्मचर्य का लोप न करके ब्रह्मचारी यज्ञस्वरूप होता है, वह उसी आचार्यकुल से आता और रोगरहित होता है और जैसा यह ब्रह्चारी अच्छा काम करता है वैसा अन्य सभी को करना चाहिये।

 **उत्तम ब्रह्मचर्य** 48 वर्ष पर्यन्त का तीसरे प्रकार का होता है। जैसे 48 अक्षर का जगती छन्द होता है, **वैसे ही जो 48 वर्ष पर्यन्त यथावत् ब्रह्मचर्य करता है उसके प्राण अनुकूल होकर सकल विद्याओं का ग्रहण करते हैं।** आचार्य और माता-पिता अपने सन्तानों को प्रथम वय में विद्या और गुणग्रहण के लिये तपस्वी कर और उन्हें तपस्वी होने का उपदेश करें और वे सन्तान आप ही आप **अखंडित ब्रह्मचर्य सेवन से तीसरे उत्तम ब्रह्मचर्य का सेवन करके पूर्ण अर्थात् चार सौ वर्ष पर्यन्त आयु को बढ़ावे वैसे अन्य भी बढ़ायें क्योंकि जो मनुष्य इस ब्रह्मचर्य को प्राप्त होकर इसका लोप नहीं करते वे सब प्रकार के रोगों से रहित होकर धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को प्राप्त होते हैं।**

स्वामी दयानन्द जी ने ब्रह्मचर्य की उपर्युक्त तीन अवस्थाओं का वर्णन करने के बाद शरीर की अवस्थाओं का वर्णन करते हुए सुश्रुत के आधार पर बताया है कि इस शरीर की चार अवस्थायें हैं। एक (वृद्धि) जो 16 वें वर्ष से लेके 25 वें वर्ष पर्यन्त सब धातुओं की वृद्धि होती है। दूसरा (यौवन) जो 25 वें वर्ष के अन्त और 26 वें वर्ष के आदि में युवावस्था का आरम्भ होता है। तीसरी (सम्पूर्णता) जो पच्चीसवें वर्ष से लेके चालीसवें वर्ष पर्यन्त सब धातुओं की पुष्टि होती है। चैथी (किचिंत्परिहाणि) तब सब सांगोपांग शरीरस्थ सकल धातु पुष्ट होके पूर्णता को प्राप्त होते हैं। तदनन्तर जो धातु बढ़ता है वह शरीर में नहीं रहता किन्तु स्वप्न, प्रस्वेदादि द्वारा बाहर निकल जाता है। यही 40 वां वर्ष विवाह का उत्तम समय है। अड़तालीसवें वर्ष में विवाह करना उत्तमोत्तम होता है।

महर्षि दयानन्द ने ब्रह्मचर्ययुक्त जीवन, उसकी महत्ता व लाभों पर यह विचार सत्यार्थप्रकाश के तृतीय समुल्लास में व्यक्त किये हैं। धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष को प्राप्त कराने वाला ब्रह्मचर्ययुक्त जीवन वैदिक आश्रम व्यवस्था के अनुसार जीवन की श्रेष्ठतम् व्यवस्था है। इससे विद्या की प्राप्ति, शारीरिक व प्राण शक्ति को बल की प्राप्ति सहित सुखी व रोगरहित दीर्घायु की प्राप्ति होती है। इतिहास में रामभक्त वीर हनुमान और भीष्म पितामह का नाम ब्रह्मचर्य के व्रत पालन के कारण अमर है। इसके बाद अखण्ड ब्रह्मचारी महर्षि दयानन्द ही हुए हैं जिन्होंने ब्रह्मचर्य के सेवन से प्रशंसनीय शारीरिक व आत्मिक उन्नति प्राप्त की और देश व संसार का अपूर्व उपकार किया। उन्होंने जिस वैदिक विचारधारा को अपने उपदेशों, लेखों व ग्रन्थों के माध्यम से प्रस्तुत किया है, वही विचारधारा समाज, देश व विश्व में सुख व शान्ति का आधार है। उनके बताये मार्ग पर चल कर ही मनुष्य अभ्युदय व निःश्रेयस की प्राप्ति कर सकते हैं। इन्हें प्राप्त करने का अन्य कोई मार्ग नहीं है। उनका बताया वैदिक मार्ग सनातन व शाश्वत होने के साथ देश व काल से अबाधित व अप्रभावित है। सभी मनुष्यों को उनके विचारों व वैदिक व्यवस्थाओं को जीवन में धारण कर अपना जीवन सफल करना चाहिये।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**